आज की कविता और वैज्ञानिक तेवर

डॉ. उषा शर्मा

व्याख्याता-हिंदी साहित्य
राज. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजसमंद

यूगीन भाषा यथार्थ की वाणी है और सौभाग्य वर्ष वह तर्क पर आधारित है संभव है इसीलिए आज के उत्तर आधुनिक युग की कवितासच्चे प्रत्यक्ष यथार्थ से गढी गई है, विवेक पर चढ़कर बोल रही है, क्योंकि यह विद्या विज्ञान से प्रभावित है। बुद्धि को अधिक स्वीकार होने के कारण इसी प्राकृतिक ज्ञान का प्रभाव सारी मानवीकी विधाओं, व्यापारों और भाव जगत पर व्यापक तौर पर रहा है। बौद्धिकता आनंद की यह पराकाष्ठा है। विज्ञान का पहला ध्येय व्यक्ति को आनंदित करना है। निश्चय ही विज्ञान बोध ने आधुनिक काव्य जगत को पूर्व कवियों, स्वप्न द्दष्टानों से अधिक समृद्ध बनाया है, क्योंकि विद्यमान कल्पना शक्ति व्यापक हो गई है और अधिक तर्काश्रित हुई है। इसके कारण कोतूहल में घाटा नहीं हुआ। रहस्य बढ़ चढ़कर विश्वसनीय हो गया। जो चल रहा है उससे थोड़ा अलग यदि कुछ होता है, तो उसकी सदैव मांग रही है और यही विज्ञान के काव्य में प्रवेश पर हुआ। जो ठंडक प्रकृति वर्णन में मनोहरी हुआ करती थी वह विज्ञान के आने पर परिवर्तित स्वरूप में रूपक व्यंग्यार्थी होने लगी -

"चुराई हुई रोशनी से रोशन

चांद की दर्प भारी चाल पर

देखो तो सही यह सितारे कितने हंस रहे हैं

इसमें सूरज का कोई दोष नहीं

क्योंकि हम जानते हैं

कि हर चारण की खुशामद ने

अपने मालिक का प्यार पाया है।"[1]

विज्ञान ने सदैव अपनी छवि को निखारा है- अधिक आकर्षक, निश्चल और बुद्धिजन्य। विज्ञान से प्रभावित कविता भी निरंतर इसी में लग रही। वहां पुराने शुरू में नए ओर जोड़ते रहे। हालांकि बीच-बीच में कई नई रागनियां उद्घाटित भी हुई, जिससे काफी जगत में रोचकता बढ़ि। वैविध्य में एकता लाना उसका चिर उद्देश्य रहा। विज्ञान के निरंतर होते चमत्कारों को कवियों ने अपनी कविता में खूबसूरती से व्यक्त किया। दिग्काल संम्बद्धता सुस्पष्ट होती चली गई। काल की चिरसम्मत्ता सततता का उल्लेख पुराने कवियों की तरह नए कवि भी नवीन तेवर से व्यक्त करने लगे।

"अतीत,

वर्तमान

-भविष्य

त्रिकाल एक धारा है

सतत प्रवाहमान

और तत्व निर्माता का सतत नृत्य-

यह पेड़ पौधे

वन-उपवन

छाए लता गुल्म

अणु अणु प्रकम्पित

थर् थर् थर्"[2]

"जमाने पर लद चले उपयोगिता वादी दृष्टिकोण ने विज्ञान को स्थूल और वस्तुपरक पाया है। जबकी सच्चाई यह है कि विज्ञान को विकसित विषयगतता की करती है। प्रौद्योगिकी तकनीकी का इरादा यथार्थ दुनिया को इस तरह टोहाना की वह मनुष्य के लिए लाभकारी हो, जबकि शुद्ध विज्ञान का लक्ष्य यथार्थ ब्रह्मांड का सच्चा तथ्यपरक स्वरूप जानना है।"[3]

अंतर अनुशासनों से परिचित कवि अपनी रचना शैली में यह भेद प्रयोग नहीं करता सच तो यह है सामान्य वैज्ञानिक भी नहीं रखता यह पार्थक्य। यह समुचित भी है क्योंकि अभिव्यक्ति के नए माध्यम अपनाते हुए यह शुद्ध दार्शनिक सतर्कता अवरोध ही पैदा करती है। दरअसल विषयों की अन्योन्याश्रित्त। और युगीन दबाव रचनाकार को मुखर करते हैं। समसामयिक कविता में इसी कारण से पाठक कहीं तो ठगासा और कहीं अन्नमना हो उठता है-

"नील द्वीप के जिस्म पर

एक पहिया चलता है

चुपचाप।

ऊपर नीचे

नीचे ऊपर

और मेरे अंदर एक चट्टान टूटने लगती है

मैं एक मशहूर गुलाब को कुचलना शुरू कर देता हूं।

सारा पानी पी लेने के बाद जड़े ऊपर चढ़ना शुरू कर देती है

और वृक्ष सूखते लगता है।"[4]

मानवीय चेतना पर तकनीकी के धंप्रभावों ने विचारों को आंतरिक ऊर्जा दी है। आज के यंत्र युग का बसींदा किसी से तो प्रभावित होता चला और इस नव संस्कृति ने संस्कारित मन को कहां झिंझोड़ा कि कविताओं का नाभिक और कवच बन गया है। श्री भवानी प्रसाद मिश्र की कविता 'जलवा चीजों का' विज्ञान कथा सा रोमांच पैदा करती है। संपूर्ण कविता के शुद्ध विज्ञान आधारित होने की संभावना की और इंगित भी होता हमें नजर आता है।

"मगर वह यह नहीं जानता

कि किसी दिन यह

जलवा चीजों का

बदलकर एक तरह का

मालवा हो जाएगा तब चीज जाएगी नहीं

आएंगी नहीं

किसी काम में

सिर्फ फटेंगी

आसमान के छोरी से धरती के छोरों तक

और आदमी तो

छार-छार हो ही चुका है

चीज भी छार-छार हो जाएंगीं

रह जाएगा

चीजों का जलवा

होकर मलवा।"[5]

विज्ञान ठहरता नहीं वह अपनी छवि निरंतर निखारता है- अधिक आकर्षक, निश्चल और बुद्धिजन्य। यहां पुराना नवीन रूप में और नवीन और भी नए रूप में। मनुष्य की जिज्ञासा विज्ञान को नए से विज्ञान के द्वारा नए से नए रूप में ढालती और प्रस्तुत करती रही है।

"वह विज्ञानमयी अभिलाषा] पंख लगाकर उड़ने की,

जीवन की असीम आशाएं] कभी ना नीचे मुड़ने की"[6]

विज्ञान के विकास से उत्पन्न अजीब सा विरोधाभास ऐसा है कि हमारी संवेदनशीलता में प्रश्न होता है- मैं यहां भला क्या हूं? यहां तो सब कुछ ग्रीनहाउस सा हो चुका है। जिसमें मृत, स्थाई और कृत्रिम सब एक समान है। इंसान ही नहीं पौधे भी संग्रहित है। यहां पौधा प्रयोग अधिक उपयुक्त जान पड़ता है क्योंकि वनस्पति और जीव का प्राकृतिक अंतर जो था वह नई व्यवस्था में वनस्पति का सा हो चला है। मनुष्य भी कृत्रिम मशीन बन रहा है। सभी कृत्रिमता की ओर दौड़े चले जा रहे हैं। प्रगति किसकी हो रही है विचारणीय है। मनुष्य का आधारभूत स्नायु मंडल ही छिन गया। प्लास्टिक शल्य क्रिया अंदरूनी सलवटे कैसे हटा पाएगी। भीतर विकृत लहरिया नित बढ़ती जा रही है। तर्काश्रित, बुद्धि संपन्न सच्चाई से रूबरू की तरफ तनाव बढ़ता ही जा रहा है-

"जब मैं बाहर आया,

मेरे हाथों में, एक कविता थी और दिमाग में

आंतों का एक्स-रे।"[7]

जैसे नियति पर किसी का अधिकार नहीं, वैसे ही आज विज्ञान तकनिकी पर किसी का अधिकार नहीं रहा है। तकनीकी विकास का मूल प्रयोजन क्या है? विकसित विज्ञान ने जहां एक और मनुष्यता के लिए वरदान की सिद्धि की है? वही वह अभिशाप भी बनता जा रहा है। इसके परिणाम में मनुष्य से मनुष्यता ही छीन ली हो। ऐसा प्रतीत होता है इसके परिणाम से उत्पन्न कोलाहल ने बहुत व्याकुलता पैदा कर दी है-

"विचारों में नहीं बची गगनोन्मुख होने की इच्छा

'ना वाणी साफ है

ना पानी साफ है

ना कहीं प्रकाश है स्वच्छ

अब सब कुछ मैला है आसमान

गंदगी बरसाने वाला

अछोर एक थैला है

समय का अर्थ

प्यार के लिए था

पांव के नीचे ठोस

किसी आदर्श की

शक्ति से संपन्न

आधार के लिए था

साफ विचार के लिए था

नीले आसमान के लिए था

और तो और लिपे पुते साफ सुथरे

छोटे मकान के लिए था।"[8]

भौतिक प्रदूषण (जिसमें मानसिक भी सम्मिलित है) सर्वत्र मेले के लिए गरमा गरम आकर्षण बम बन चुका है। हमारी दैनिक समस्याएं अर्थ से जुड़ी है और राजनीतिक दोगलापन बर्दाश्त से बाहर हो चुका है। आपधापी के इस चक्र में हम अपना व्यष्टिपन खोते जा रहे हैं। वस्तुओं की तरह मनुष्य को तोलने का मानक भी सांख्यिकी हो चले है। इतने प्रतिशत गरीब, इतने प्रतिशत मध्य, इतने प्रतिशत यह जाति, इतने प्रतिशत वह जाति, यही शोर चारों तरफ दिखाई दे रहा है। बीमार मरीज की पहचान संख्या पलंग हो गयी है और व्यक्ति की पहचान उसका आधार कार्ड नंबर। सामान्य व्यक्ति टाइप के छोटे पॉइंट के हकदार ही रह गए हैं जबकि मिस्टर आतंकवादी आज इतने प्रमुख हैं कि मोतियाबिंद वाला भी आसानी से पढ़ सकता है। असुरक्षित महसूस करते ईमानदार परिश्रमी के पक्ष से जुझारू स्वर शब्द आज की कविता में रेखांकित हो गया है। इस चिड़ना व कुढ़न को व्यक्त करती यह कविता की पंक्तियां देखें-

"खाली हाथ और भारी मन

रेत के ऊपर

आकाश के नीचे

कोहरे की नदी में

चित लेटे हुए हैं

मैं सूर्य मांगता हूं

मुझे बर्फ मिलती है।"[9]

जयशंकर प्रसाद की यह पंक्तियां भी हमें यहां स्मरण हो आती है 'अभिशाप ताप की ज्वाला से, जल रहा आज मन और अंग'।

हमारी कविता के सपाट बयानी के साथ-साथ नवीन भाव भंगीमाएं वैज्ञानिक कला पक्ष के सौन्दर्य को भी प्रकट करती है। प्रस्तुत मूल पाठ में संक्षेपण, भाव जगत से विचार जगत को संक्रमित होने के कारण वैज्ञानिक शब्द की नई शब्दावली का भी विशिष्ट योगदान है। वैज्ञानिक शब्दावली इतनी लचीली नहीं नजर आती इस कमजोरी से हमें थोड़ा लाभ अवश्य मिला है। क्योंकि यहां यथा तथ्य सीधे प्रतिक्रिया पैदा करती है। मिसाइल अपने ठिकाने पर ही जाती है, कहीं बढ़कर ताजगी लाया है नया अलंकरण। स्पष्ट है हमारा इशारा फैशन की तरह चल पड़ा शब्दों की तरफ नहीं है। नवीनीकरण और तकनीकी शब्दों का प्रयोग कविता के शब्दों को स्वयं में संकट से बढ़कर गहरे प्रतीक व्यक्त करता है। आत्मालाप में नव शैली भिन्न नहीं कोतुक पैदा करती है। सीधे समर्पण के लिए यह बानगी देखें-

"बशर्ते की वेल्डिंग मशीन की तरह तुम

मुझे तुरंत पिधला दो

और बिना घबराए इस तरह जोड़ दो

कि संधि का कहीं पता ही ना चले।"[10]

निश्चय ही वैज्ञानिक चेतना ने अनिश्चित और क्षुद्रता के प्रति और विनम्र हो जाना सिखाया। जीव विज्ञान ने ही तो अवगत कराया कि स्थाई तो यहां कुछ भी नहीं, निश्चित तो मृत्यु है। इसीलिए शायद युद्ध विज्ञान की प्रयोगशाला बन गया एक से एक खतरनाक आयुध पूरे संसार को समाप्त कर देने के लिए आतुर दिखाई देते हैं। कवि जयशंकर प्रसाद की यह पंक्तियां यहां विचारणीय है-

जीवन सारा बन जाए युद्ध,

उस रक्त अग्नि की वर्षा में, बह जाए सभी के भाव शुद्ध।

मानवता की अस्तित्व को समाप्त कर देने के लिए आतुर दिखाई देता है आज के समय में विज्ञान और कविता साहित्य भी विपरीत ध्रुव के दिखाई देते हैं। माना कविता अंतर जगत की खोज है और विज्ञान बाह्य जगत में अनुसंधान से संबंधित, मगर किसे तो ऊपरी कहें और किस भीतरी। आज के समय में विज्ञान और कविता साहित्य ध्रुव विपरीत हो ही नहीं सकते मन कविता अन्तर जगत की खोज है और विज्ञान प्रकटत: बाह्य जगत में अनुसंधान से संबंधित मगर किस तो ऊपरी कहे और किसे भीतरी? इसी अंतर ज्ञान में जूझते रहना है-

'जितने उभय फलन है किसी भी निर्मग्न लेखन में

कविता और शब्द का रिश्ता

समय और समुद्र का रिश्ता है

मैं केवल एक मूर्त क्षणभंगुर संयोजन

लगातार लगता विरमों के बीच

स्वतंत्रता खोजता

सीमित होने का विरोध करता हूं।'

संदर्भ -

1 मुनी रूपचंद- 'चुराई गई रोशनी से रोशन' कविता से

2 बलदेव वंशी- 'आत्मदान' कविता से

3 धनराज चौधरी- 'समसामयिक कविता और विज्ञानी तेवर' निबंध से

4 सतीश वर्मा - लाल आसमान कविता से

5 भवानी प्रसाद मिश्र- जलवा चीजों का कविता से

6 जयशंकर प्रसाद- कामायनी - स्वप्न सर्ग से

7 धूमिल - पटकथा कविता से

8 भगवती प्रसाद मिश्र - वातावरण के रण में कविता से

9 चंद्रकांत देवताले - दीवारों पर खून से कविता से

10 विनय - अनम होने से पहले कविता से